ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला [प्राकृत ग्रन्थाङ्क २]

करलक्खणं

[सामुद्रिक शास्त्र]

सम्पादकः—

प्रो० प्रफुल्लकुमार मोदी, एम्. ए.

किंग एडवर्ड कॉलेज, अमरावती, सी. पी.

भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

प्रथम आवृत्ति
छह सौ प्रति

श्रावण, वीरनि० सं० २४७३
वि० सं० २००४
अगस्त १९४७

मूल्यम् १)
रूप्यकमेकम्

मुद्रकः—भार्गव भूषण प्रेस, बनारस ।

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

स्व० पुण्यश्लोका माता **मूर्तिदेवी** की पवित्र स्मृति में

तत्सुपुत्र **सेठ शान्तिप्रसाद जी** द्वारा

संस्थापित

ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में प्राकृत संस्कृत अपभ्रंश हिन्दी कन्नड तामिल आदि प्राचीन भाषाओं में उपलब्ध आगमिक दार्शनिक पौराणिक साहित्यिक और ऐतिहासिक आदि विविध विषयक जैन साहित्य का अनुसन्धान, उसका मूल और यथासंभव अनुवाद आदि के साथ प्रकाशन होगा। जैन भंडारों की सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, विशिष्ट विद्वानों के अध्ययनग्रन्थ और लोकहितकारी जैन साहित्य भी इसी ग्रन्थमाला में प्रकाशित होंगे।

ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक (प्राकृत विभाग)—

प्रो० डॉ० हीरालाल जैन, एम० ए०, डी० लिट्०, मॉरिस कॉलेज, नागपुर।

प्रो० डॉ० आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये, एम० ए०, डी० लिट्०, राजाराम कॉलेज, कोल्हापुर।

प्राकृत ग्रन्थाङ्क २

प्रकाशक—

अयोध्याप्रसाद गोयलीय,

मंत्री, **भारतीय ज्ञानपीठ काशी,**

दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस सिटी।

मुद्रक—पं० पृथ्वीनाथ भार्गव, भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, काशी।

स्थापनाब्द
फाल्गुन कृष्ण ९
वीरनि० २४७०

विक्रम सं० २०००
१८ फरवरी १९४४

JNANA-PITHA MOORTIDEVI JAIN GRANTHAMALA

PRAKRIT GRANTHA No. 2

KARALAKKHANAM

EDITOR:—

Prof. PRAFULLA KUMAR MODI, M. A.

KING EDWARD COLLEGE, AMRAOTI, C. P.

BHARATIYA JNANA PITHA KASHI

First Edition 600 Copies. SHRAVANA, VIR SAMVAT 2473
VIKRAMA SAMVAT 2004
AUGUST, 1947 *Price. Rs. 1/-*

BHARATIYA JNANA-PITHA

KASHI.

FOUNDED BY

SETH SHANTIPRASAD JAIN

IN MEMORY OF HIS LATE BENEVOLENT MOTHER

MOORTI DEVI

JNANA-PITHA MOORTI DEVI JAIN GRANTHAMAL

IN THIS GRANTHAMALA CRITICALLY EDITED JAIN AGAMIC, PHILOSOPHICAL, PAURANIC, LITERARY, HISTORICAL AND OTHER ORIGINAL TEXTS IN PRAKRIT, SANSKRIT, APABHRANSHA, HINDI, KANNADA & TAMIL ETC AVAILABLE IN ANCIENT LANGUAGES, WILL BE PUBLISHED IN THEIR RESPECTIVE LANGUAGES WITH THE TRANSLATION IN MODERN LANGUAGES
AND
ALSO CATALOGUES OF BHANDARAS, INSCRIPTIONS, STUDIES, OF COMPETENT SCHOLARS & POPULAR JAIN LITERATURE WILL BE PUBLISHED.

GENERAL EDITORS OF THE PRAKRIT SECTION

Prof. Dr. HIRALAL JAIN, M. A., D. LITT.,
MORRIS COLLEGE, NAGPUR.

Prof. Dr. A. N. UPADHYE, M. A., D. LITT.,
RAJARAM COLLEGE, KOLHAPUR.

PRAKRIT GRANTHA No. 2

PUBLISHER

AYODHYA PRASAD GOYALIYA,
SECRETARY,
BHARATIYA JNANA PITHA,
DURGAKUND ROAD, BENARES CITY.

Founded in
Falgun Krishana 9
Vir Sam. 2470

Vikram Samvat 2000
18th Feb. 1944.

प्राक्कथन

मनुष्य की हथेलियाँ (करतल), अपनी आकृति, बनावट, मृदुता, रंग, रूप और रेखाओंकी दृष्टिसे, एक दूसरेसे अति भिन्न होती हैं। शरीरशास्त्रियोंका कहना है कि, शरीरका यह ढाँचा जिस चमड़ेसे आवृत है वह कुछ तन्तुओंसे बँधा है। वे सब एक दूसरेसे सम्बन्धित ही नहीं हैं बल्कि उनसे मोड़के स्थानोंमें कुछ चिह्न भी उठ आए हैं। इन हथेलियोंकी विषमताका कारण नाना आकृतिकी मांसपेशियाँ हैं। शरीरशास्त्री यह विश्वास नहीं करते कि यन्त्ररूपमें बने हुए घुमावदार मोड़ों और संकेतोंका आध्यात्मिक रहस्यमय या भविष्य बतानेवाला कोई अर्थ होता है।

मनुष्यमें अपने भविष्य जाननेकी इच्छा उतनी ही पुरातन है जितना कि स्वयं मनुष्य, और यह उतनी ही बलवती होती जाती है ज्यों ज्यों मनुष्यका वातावरण हर तरफ अनिश्चितसा दिखता है। प्रति मनुष्यमें आश्चर्यरूपसे अति भिन्न पाई जाने वाली हथेलियाँ ही भविष्य-ज्ञानपद्धतिका आधार हैं और इसे सामुद्रिक (हस्तरेखा) विद्या कहते हैं। हाथकी रेखाओं और चिह्नोंका, खासकर हथेलीका, लाक्षणिक अर्थ है। वे हमारे मानसिक और नैतिक स्वभावोंसे ही सम्बन्धित नहीं हैं बल्कि व्यक्तिकी भावी घटनाओंकी गतिविधियों पर भी प्रकाश डालते हैं। यदि कुछ चिह्न हमारे अतीतकी बातें बताते हैं तो कुछ भविष्यकी।

शरीरपरके चिह्नोंसे मानवीय प्रवृत्तियोंका भविष्य कहना एक पुराना सिद्धान्त है तथा प्रायः इसका उल्लेख प्राचीन भारतीय साहित्यमें मिलता है। और सामुद्रिक विद्या उससे एक दम सम्बन्धित है। चूँकि शारीरिक चिह्नोंकी व्याख्या सिर्फ लाक्षणिक है पर पूर्वकी और पश्चिम देशोंकी मौलिक मान्यताएँ एक दूसरेसे नहीं मिलतीं।

भारतीय पद्धति रेखाओं, शङ्ख तथा चक्रोंपर ज्यादा जोर देती है जब कि पाश्चात्य पद्धतिमें नाना आकृतिओं और रेखाओंको महत्त्व दिया गया है, तथा उसमें एक ही रेखाके अर्थोंमें बहुधा भेद पड़ जाता है। चाहे मौलिक मान्यताएँ प्रामाणिक न हों तथा बहुतसे अर्थ तर्कपूर्ण भले न हों पर एक तथ्य तो जरूर है कि अनेकोंके लिये यह सामुद्रिक विद्या आकर्षणकी वस्तु है। तथा गत कुछ वर्षोंमें प्रधान-प्रधान व्यक्तियोंके हस्तरेखा चित्र लिये गये हैं तथा उनसे कुछ आनुमानिक निष्कर्ष निकाले गये हैं। सामुद्रिक विद्या बहुतोंके लिए संसारी जीविकाका धन्धा हो गया है परन्तु करलक्खण, जो कि यहाँ से प्रथम बार सम्पादित हो रहा है, के ग्रन्थकारका उद्देश्य धार्मिक ही है। इस ग्रन्थके लिखनेमें उनका उद्देश्य धार्मिक संस्थाओंको इस योग्य बनानेका है कि जिससे वे व्यक्तियोंकी योग्यताको माप सकें और उनको (पुरुष या स्त्रीको) धार्मिक प्रतिज्ञाएँ तथा नियम दे सकें।

इस सामुद्रिक शास्त्रका, भविष्य कहनेकी पद्धतिके रूपमें प्राचीन भारतीय विद्यामें स्थान है और उस विषयको प्रतिपादन करनेवाली यह छोटी पुस्तक करलक्खण भारतीय ज्ञानपीठ काशीसे प्रकाशितकी जा रही है। प्राकृत पाठ, संस्कृत छाया तथा हिन्दी शब्दार्थके साथ हैं और सम्पादक प्रफुल्लकुमार मोदीने यह सब हमारे सामने स्पष्ट रूपसे रखा है। मोदीजी एक बुद्धिमान् नवयुवक विद्वान् हैं और यह संस्करण उनकी भावी योग्यताओंको बतलाता है। अपने पिता प्रो० डा० हीरालाल जैनकी मातहतीमें शिक्षित हुए, इस युवकसे सम्भावना है कि भविष्यमें संस्कृत और प्राकृत साहित्यके अनुसन्धानोंसे, हमें बहुत कुछ दे सकेगा।

श्री सेठ शान्तिप्रसाद जैनने प्राचीन भारतीय संस्कृति और सभ्यता के बहुविध रूपोंको संसारके सामने रखनेके आदर्श उद्देश्योंसे प्रेरित हो भारतीय ज्ञानपीठको स्थापित किया है। उनकी पत्नी श्रीमती रमारानी भी उनके उत्साह और उदारताके अनुरूप ही संस्थाके प्रकाशनोंमें तीव्र अभिरुचि रखती हैं। वे दोनों हमारे अति धन्यवादके पात्र हैं। हमें अनेक आशाएँ हैं कि यह संस्था न्यायाचार्य पं० महेन्द्रकुमारजी शास्त्रीके उत्साहपूर्ण प्रबन्धके नीचे अनेक विद्वानोंके सक्रिय सहयोगसे बहुतसे योग्य प्रकाशन सामने लाएगी और इस तरह हमारे देशकी सांस्कृतिक परम्पराको और समृद्ध करेगी।

कोल्हापुर
१५ अगस्त १९४७

आ० ने० उपाध्ये

प्रकाशन–व्यय

२००) छपाई	१००) कार्यालय व्यवस्था, प्रूफ संशोधन आदि
६०) कागज	२००) कमीशन, विज्ञापन
१०) बाइंडिंग	१००) भेंट आलोचना
३०) फुटकर	

कुल ७००)

६००) प्रति छपी, लागत एक प्रति १=)॥।

करलक्खणं

प्रस्तावना

हस्तरेखाज्ञानका प्रचार भारतवर्षमें बहुत प्राचीन कालसे रहा है। पुराणोंमें, बौद्धोंके पालि धर्मशास्त्रोंमें तथा जैनोंके प्राकृत आगमोंमें भी इसका उल्लेख पाया जाता है। संस्कृतमें उसे सामुद्रिक शास्त्र कहा गया है और अग्निपुराणके अनुसार प्राचीन कालमें समुद्र ऋषिने अपने शिष्य गर्गको इस विद्याका अध्ययन कराया था (लक्षणं यत्समुद्रेण गर्गायोक्तं यथा पुरा—अग्निपुराण)। वराहमिहिरने भी अपने सुप्रसिद्ध ज्योतिष ग्रंथ बृहत्संहिताके महापुरुषलक्षण नामके सर्ग (६७-६९) में इसका उल्लेख किया है। यहां तक कि बृहत्संहिताके टीकाकार उत्पलभट्टने 'यथाह समुद्रः' कहकर बहुतसे श्लोक समुद्र ऋषि प्रणीत उद्धृत किये हैं। हरिवंशपुराणके रचयिता जिनसेनाचार्यने भी 'नरलक्षण'के कर्ताका उल्लेख किया है और उन्हीं लक्षणोंका वर्णन हरिवंशपुराणके २३ वें सर्गके ५५ वें श्लोकसे १०७ वें श्लोक तक पाया जाता है उनमेंसे १३ (८५-९७) श्लोकोंका विषय हस्तलक्षण और उनकी सार्थकता है, अतः वे पूर्णतः हस्तरेखाज्ञानविषयक कहे जा सकते हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ हस्तरेखाज्ञान सम्बन्धी छोटी सी पुस्तिका है। इस ग्रन्थकी जो प्राचीन हस्तलिखित प्रति मुझे उपलब्ध हुई थी उस पर ग्रन्थका नाम 'सामुद्रिक शास्त्र' दिया गया है। किन्तु ग्रन्थका असली नाम 'करलक्खणं' है जैसा कि उसकी आदि और अन्तकी गाथाओंसे सुस्पष्ट हो जाता है। यह ग्रन्थ ६१ प्राकृत गाथाओंमें पूर्ण हुआ है। ग्रन्थके विषयका सार निम्न प्रकार है—

प्रथम गाथामें रचयिताने जिन भगवान् महावीरको प्रणाम कर पुरुष और स्त्रियोंके करलक्षण कहनेकी प्रतिज्ञा की है। दूसरी गाथाके अनुसार पुरुषको लाभ व हानि, जीवन व मरण तथा जय व पराजय रेखानुसार ही प्राप्त होते हैं। गाथा ३ के अनुसार पुरुषोंके लक्षण उनके दाहिने हाथमें और स्त्रियोंके उनके बायें हाथमें देखकर शोधना चाहिये। इसके आगे कर्ताने अंगुलियोंके बीच अन्तरका फल वर्णन किया है (गा० ४-५); फिर उनके पर्वोका वर्णन है (गा० ६); तत्पश्चात् मणिवंधकी रेखाओंका उल्लेखकर (गा० ७-११) विद्या, कुल, धन, रूप और आयुसूचक पांच रेखाओंका वर्णन किया है (गा० १२-२२)। आगेकी तीन गाथाओंमें (२३-२५) रेखाओंके आकार, रूप व रंगके अनुसार उनका फल बतलाया है। फिर अंगूठेके मूलमें यवोंका फल कहा गया है (गा० २६-२७) तथा उनके द्वारा भाई, बहिन व पुत्रपुत्रियोंकी सूचना दी गई है (गा० २८-३०)। फिर लेखकने अंगूठेके नीचे यव,

केदार, काकपद आदिके गुणदोष बतलाये हैं (गा० ३१-३५)। फिर कनिष्ठिका अंगुलीके नीचेकी रेखाओंसे पति-पत्नियोंकी सूचना दी गई है (गा० ३६-३९)। तत्पश्चात् व्रत (गा० ४०) मार्गण (खोजबीन) (गा० ४१) व गुरुदेव स्मरण (गा० ४२) सूचक रेखाओंका उल्लेख है। फिर लेखकने अंगुलियों आदि पर भँवरी (गा० ४३) व शंख (गा० ४४) रूप चिह्नोंका फल कहा है। फिर नखोंके आकार व रंग आदिका फल कहा गया है (गा० ४५) और उसके आगे मत्स्य, पद्म, शंख, शक्ति आदि चिह्नोंकी सूचना दी गई है (गा० ४६-५३)। फिर हथेली पर बहु रेखाओं व अल्प रेखाओंका फल कहा गया है (गा० ५४) और तत्पश्चात् परोपकारी हाथके लक्षण बतलाये गये हैं (गा० ५५)। कुछ चिह्न ऐसे हैं जो धन, वंश व आयु रेखाओंके फलोंको बढ़ा या घटा देते हैं (गा० ५६)। जीवरेखा व कुलरेखाके मिल जानेका फल गा० ५७ में तथा हाथके स्वरूपका फल गाथा ५८-५९ में कहा गया है। कैसे यव वाचनाचार्य व उपाध्याय व सूरि होने वाले पुरुषकी सूचना देते हैं यह गा० ६० में बतलाया गया है। अन्तकी गाथामें लेखकने विनयके साथ बतलाया है कि यह ग्रन्थ उन्होंने संक्षेपतः यतिजनोंके हितार्थ इसलिये लिखा है कि वे इसके द्वारा प्रत्येक व्यक्तिकी योग्यता जान कर ही उसे व्रत दें।

दुर्भाग्यतः लेखकने अपना नाम व समय कहीं नहीं बतलाया और न हमारे पास कोई ऐसे साधन उपलब्ध हैं जिनसे इन बातोंका पता व अनुमान लगाया जा सके।

इस ग्रन्थकी भाषा प्रायः शुद्ध महाराष्ट्री है, क्योंकि इसमें 'त्' के लोप होनेपर केवल उसका संयोगी स्वर यश्रुति सहित या बिना उसके ही पाया जाता है; 'थ' के स्थानपर कहीं भी 'ध' न होकर सर्वत्र 'ह' ही हुआ है, और पूर्वकालिक कृदन्त अव्यय 'ऊण' प्रत्यय लगाकर बनाया गया है।

यद्यपि ग्रन्थ छोटा सा है, तथापि वह इसलिये विशेष महत्त्वपूर्ण है क्योंकि उसके द्वारा प्राकृतमें शास्त्रीय साहित्यके संबंधमें हमारा ज्ञान विस्तृत होता है।

इस अवसर पर मैं भारतीय ज्ञानपीठ, काशीके अधिकारी वर्गको धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने इस पुस्तकको अपनी ग्रन्थमालामें सम्मिलित कर प्रकाशित करनेकी कृपा की।

किंग एडवर्ड कालेज,
अमरावती।
अप्रैल १९४७

प्रफुल्लकुमार मोदी

FOREWORD

The human palms considerably differ from each other in their shape, structure, softness, colour, figures and lines. The anatomist explains that the skin covering the skeleton is tied down by certain fibres which not only hold them together but at the same time give rise to certain marks along the folding points of the skin. The unevenness of the palm, however, is due to the muscles of various sizes. He refuses to believe that this mechanical arrangement of flexion-folds has any psychic, occult or predictive signification.

The desire to know future is as old as man, and it increases all the more when man's environments are uncertain in every respect. The human palm, as it varies in a wonderfully interesting manner from person to person, has come to be the basis of a predictive system known as palmistry. The lines and figures on the hand, especially the palm, are symbolically interpreted : they are connected not only with mental and moral dispositions but are said to reflect also the current of future events in the individual's life. If some marks record past events, others indicate the future ones.

The prediction of human tendencies from marks on the body is a very old idea, often referred to in early Indian literature ; and the system of palmistry is quite akin to it. As the interpretation of physical marks can be only symbolical, the basic presumptions in the East and West are not identical. The Indian system lays more stress on the lines, conchs and wheels while the western system takes into account the various mounts as well as lines : the meaning attached to the same line often varies.

The basic presumptions may not be verifiable, and some of the interpretations may not appeal to reason ; still it is a fact that many a mind has a strong fascination for palmistry ; and during later years palm-prints of eminent personalities are taken and certain conclusions are inductively arrived at. Palmistry has become a profession with many for worldly ends ; but the author of the Kara-lakkhanam which is edited here for the first time, has a more pious aim : he tells us that his object in writing this book was only to enable religious missionaries to prejudge the potentialities of a person and then only administer religious oaths and vows to him or her.

Palmistry as a system of predicting future has found place in ancient Indian wisdom as well, and a small text dealing with palmistry, the *Karalakkhanam*, is being published here by the Bharatiya Jnanapitha, Benares. The Prakrit text is accompanied by Sanskrit Chaya and Hindi paraphrase : and all this is presented to us in a neat manner by the editor, Shri Prafulla Kumar Modi. Mr.Modi is an intelligent young scholar; and this edition augurs well of his potential abilities. Trained as he is under his father, Professor Dr.Hiralal Jain, it is expected that he would soon give us more and more of his researches in Prakrit and Sanskrit literature.

It is with the noble object of making known to the world the manifold aspects of ancient Indian culture and civilization that the Bharatiya Jnanapitha has been established by Shri Shantiprasad Jain. His zeal and generosity are worthily matched by the keen interest which his wife Shrimati Rama Rani takes in the publications of the Institution. Both of them deserve our best thanks. We have every hope that this Institution under the enthusiastic management of Nyayacharya Pt. Mahendra Kumar Shastri will bring out many worthy publications with the active cooperation of various scholars and make thereby the cultural heritage of our nation all the more rich.

Kolhapur :
15 August, 1947.

A. N. Upadhye,

KARALAKKHANAṀ

INTRODUCTION

Palmistry has been practised in India from very ancient times. References to it are found in the Puranas, in the Pali books of the Buddhist Canon as well as in the Prakrit works of the Jaina Agama. The Sanskrit name for palmistry is "*Samudrika*" and according to the Agni Purana, it is so called because a teacher by name Samudra had taught it to Garga in ancient times. Varaha Mihira also makes mention of it in his famous treatise on astrology *Brihat Samhita* in the chapters on Mahapurusha-lakshana (chapters 67–69). Not only that, but the commentator Utpala Bhatta quotes many verses which he has ascribed to Samudra by saying "*Yathaha Samudrah*". Jinasena in his Harivamsa Purana mentions Sagara as the author of a book on the characteristics of man (Nara-lakshana) a description of which occupies verses 55 to 107 of chapter 23. Of these thirteen verses from 85 to 97 are devoted to the signs of the hand and their significance, and therefore treat of palmistry in the strict sense of the term.

The work now under treatment is a small hand book on palmistry. The only old manuscript that was available to me bears the title of "*Samudrika Sastra.*" But the real name of the work is "*Karalakkhanam*" as is clear from the opening and the closing verses of the book. The whole work is completed in 61 verses composed in Prakrit Gathas. Its contents may be summarised as follows :—

In the first verse the author pays homage to Jina Mahavira and proposes to deal with the signs of the hands of men and women. According to verse two, a man gets profit or loss, happiness or sorrow, life or death, victory or defeat, according to the lines (found on the palm of his hand). The signs of men, according to verse 3, should be studied on the right hand, and those of women on the left. The author then deals with the significance of the interval between the fingers (verses 4-5) and of the nature of their joints (verse 6). Then the lines of the wrist are dealt with (verses 7-11), and the five most significant lines denoting learning, family, wealth, beauty and longevity are named and described (verses 12-22). The form, shape and colour of the lines are explained in the next three verses (23-25). Then the barley marks below the thumb are treated (verses 26-27), and they are said to indicate the number of brothers,

---

* लक्षणं यत्समुद्रेण गर्गायोक्तं यथा पुरा Agni P. p. 243.

sisters and children which a person may have (verses 28-30). The author then goes on to deal with the section of the palm below the thumb (verses 31-35) and that below the small finger (verses 36-39). Amongst the latter are included some lines which would point out how many wives or husbands the person would have. There are, then, the lines indicating the religious tendencies (Vrata Rekha V. 40), potentialities of research (Margana Rekha V. 41), and pious tendencies (V. 42). The author then goes on to describe the significance of the whirl marks (Bhramara V. 43) and conch marks (Samkha V. 44). The form and colour of the nails are then treated (verse 45), continued by a treatment of the marks of fish, lotus, cross, etc. (verses 46-53). The significance of too many lines or too few lines on the palm is then shown (verse 54). What sort of hand denotes possibilities of service to humanity is then explained (verse 55). How certain specific marks aggravate or assuage, heighten or decrease the effect of other marks and signs is then shown (V. 56). The effect of the life line and family line joining together is then stated (V. 57) and then the effect of the form and make up of the hand as a whole is given (V. 58-59). What lines indicate a would-be saint or teacher is then explained (V. 60); and, lastly, the author meekly tells us that his object in writing the book was only to enable religious missionaries to pre-judge the potentialities of a person and then only administer the religious oaths and vows to him or her.

Unfortunately, the author has not given us anywhere his name or date of the composition; and there is no material at present available to me to determine these with any precision.

The language of the work is almost pure Maharashtri Prakrit, there being only the vowels left with or without the Ya-sruti when '*ta*' is dropped; '*tha*' never being changed to '*dha*' but always to '*ha*' and '*una*' being the past participle absolute termination.

The work, small though it be, is valuable as it enriches our knowledge about the literature in Prakrit devoted to technical subjects.

I take this opportunity to thank the authorities of the Bharatiya Jnana Pitha Kashi, for undertaking to publish this work in their series.

King Edward College,
Amraoti.
April, 1947.

P. K. Modi.

विषय सूची

करलक्खणं

कर-लक्खणं

(१)

पणमिय जिणममिअगुणं गयरायसिरोमणिं महावीरं ।
वुच्छं पुरिसत्थीणं करलक्खणमिह समासेणं ॥

प्रणम्य जिनममितगुणं गतरागशिरोमणिं महावीरम् ।
वक्ष्ये पुरुषस्त्रियोः करलक्षणमिह समासेन ॥

अनंत गुणोंके धारक तथा रागके जीतनेवालोंमें शिरोमणि, महावीर जिनेन्द्रको प्रणाम करके, मैं पुरुष और स्त्रियोंके हस्तरेखाओंके लक्षण, संक्षेपमें, बतलाता हूँ ।

(२)

पावइ लाहालाहं सुहदुक्खं जीविअं च मरणं च ।
रेहाहिं जीवलोए पुरिसो विजयं जयं च तहा ॥

प्राप्नोति लाभालाभौ सुखदुःखे जीवितं च मरणं च ।
रेखाभिः जीवलोके पुरुषः विजयं जयं च तथा ॥

इस जीवलोकमें मनुष्य लाभ और हानि, सुख और दुःख, जीवन और मरण, जय और पराजय रेखाओंके बलसे पाता है ।

(३)

दाहिणहत्थे पुरिसाण लक्खणं वामयम्मि महिलाणं ।
रेहाहिं सुद्ध णिज्झाइऊणं तो लक्खणं सुणहं ॥

दक्षिणहस्ते पुरुषाणां लक्षणं वामके महिलानाम् ।
रेखाभिः शुद्धं निर्ध्याय तल्लक्षणं शृणुत[२] ॥

पुरुषोंके लक्षण दाहिने हाथ तथा स्त्रियोंके बायें हाथकी रेखाओंको खूब ध्यानसे देखकर (जाने जाते हैं) । उन लक्षणोंको सुनो ।

३, १ प्रतौ 'णिज्झाकुणं' इति पाठः ।   २ प्रतौ 'जानीहि' इति पाठः ।

हाथोंके स्वरूपका फल वराहमिहिरने इस प्रकार बताया है-जिनके हाथ बानरसदृश हों वे धनी और जिनके व्याघ्रके समान हों वे पापी होते हैं। (बृहत्संहिता ६७, ३७)

(४)

अङ्गुल्यन्तरफलम्-

बालत्तणम्मि सुलहं पएसिणी-मज्झमंतरघणम्मि।
मज्झिम-अणामियाणंतरम्मिं तरुणत्तणे सुक्खं॥

बालत्वे सुलभं प्रदेशिनीमध्यमान्तरघने।
मध्यमाऽनामिकयोः अन्तरे सघने तरुणत्वे सौख्यम्॥

यदि प्रदेशिनी और मध्यकी अंगुलियोंका अंतर सघन हो (अर्थात् वे एक दूसरेसे मिली हों और मिलनेसे उनके बीचमें कोई अन्तर न रहे) तो बालकपन में सुख होवे। यदि मध्यमा और अनामिकाके बीच सघन अंतर हो तो जवानीमें सुख हो।

हाथकी अंगुलियोंका फल वराहमिहिरने इस प्रकार बताया है-लम्बी अंगुलियां दीर्घजीवियोंकी, अवलित (सीधी) सुभगोंकी, सूक्ष्म (पतली) बुद्धिमानोंकी और चपटी दूसरोंकी सेवा करने वालोंकी होती हैं। मोटी अंगुलियों वाले निर्धन और बाहरको झुकी अंगुलियों वाले शस्त्रसे मरने वाले होते हैं। (बृहत्संहिता ६७, ३६-३७)

विरली अंगुलियोंसे मनुष्य निर्धन तथा सघनसे धनसंचय करने वाले होते हैं। (बृहत्संहिता ६७, ४३)

(५)

पावइ पच्छा सुक्खं कणिट्ठिआणामिअंतरघणम्मि।
सव्वंगुलीघणम्मि अ होइ सुही धणसमिद्धो अ॥

प्राप्नोति पश्चात् सौख्यं कनिष्ठिकाऽनामिकान्तरघने।
सर्वाङ्गुलीघने च भवति सुखी धनसमृद्धश्च॥

---

४. १ प्रतौ '० तरणम्मि' इति पाठः।

५. १ प्रतौ 'कनिष्ठिकानामिकयोः अन्तरघने' इति पाठः।

यदि कनिष्ठिका और अनामिकामें सघन अन्तर हो तो बुढ़ापेमें सुख होवे। यदि सभी अंगुलियां सघन हों तो मनुष्य सदा सुखी और धन-सम्पन्न होता है।

(६)

अङ्गुल्यन्तरफले पर्वणां फलम्—

सम्मंसंगुलिपव्वो पुरिसो धणवं सुही सया होइ।
जइ सो अमंसपव्वो ता तस्स सिरी ण संभवइ॥

समांसाङ्गुलिपर्वा पुरुषः धनवान् सुखी सदा भवति।
यदि स अमांसपर्वा तर्हि तस्य श्रीः न संभवति॥

जिस पुरुषकी अंगुलियोंके पर्व मांसल हों वह धनवान् और सदा सुखी होता है। यदि उसके पर्व मांसल न हों तो उसके धन नहीं होता।

वराहमिहिरके अनुसार जिनकी अंगुलियोंके पर्व (पोर) लम्बे हों वे सौभाग्यवान् और दीर्घायु होते हैं। (बृहत्संहिता ६७, ४२)

(७)

मणिबन्धविषये गाथापञ्चकम्—

धणकणगरयणजुत्तो मणिबंधे जस्स तिरिण रेहाओ।
आहरणविविहभागी पच्छा भद्दं च सो लहइ॥

धनकनकरत्नयुक्तः मणिबन्धे यस्य तिस्रः रेखाः।
आभरणविविधभागी पश्चात् भद्रं च स लभते॥

जिसके मणिबंध (कलाई) पर तीन रेखाएं हों उसे धान्य, सुवर्ण और रत्नोंकी प्राप्ति होती है, उसे नाना प्रकारके आभूषणोंका उपभोग मिलता है तथा अन्तमें उसका कल्याण होता है।

(८)

महुपिंगलाहि सुहिआ अविणट्ठवया हवंति रत्ताहिं।
सुहमाहिं मेहावी सुभगा य समत्तमूलाहिं॥

मधुपिङ्गलाभिः सुखिताः अविनष्टव्रताः भवन्ति रक्ताभिः ।
सूक्ष्माभिः मेधावी सुभगाश्च समत्वमूलाभिः ॥

यदि इन रेखाओंका रंग मधु (शहद) के समान पिंगल (लाल कत्था रंग) का हो तो पुरुष सुखी होते हैं; यदि रक्तके समान लाल हों तो उनका कभी व्रत भंग नहीं होता; यदि सूक्ष्म हों तो वे बुद्धिमान् होते हैं; तथा यदि उनकी मूल सम हो तो वे सुभग अर्थात् स्वरूपवान् और भाग्यवान् होते हैं ।

मणिबंधके स्वरूपका फल वराहमिहिरने इस प्रकार बताया है—जिनका मणिबंध (कलाई) गठा हुआ और दृढ हो वे राजा होते हैं, ढीला होनेसे हाथ काटा जाता है तथा शब्द उत्पन्न करने वाला हो तो पुरुष दरिद्री होता है ।

(बृहत्संहिता ६७, ३८)

(९)

तिप्परिक्खित्ता पयडा जवमाला होइ जस्स मणिबंधे ।
सो होइ धणाइण्णो खत्तिय पुण पत्थिवो होइ ॥

त्रिपरिक्षिप्ता प्रकटा यवमाला भवति यस्य मणिबन्धे ।
स भवति धनाकीर्णः क्षत्रियः पुनः पार्थिवः भवति ॥

जिसके मणिबंधमें यवमालाकी तीन धाराएं हों वह धनसे परिपूर्ण होता है और यदि वह क्षत्रिय हो तो राजा बनता है ।

(१०)

दुप्परिक्खित्ता रम्मा जवमाला होइ जस्स मणिबंधे ।
सो हवइ रायमंती विउलमइ ईसरो होई ॥

द्विपरिक्षिप्ता रम्या यवमाला भवति यस्य मणिबन्धे ।
स भवति राजमन्त्री विपुलमतिः ईश्वरः भवति ॥

जिसके मणिबंधमें यवमालाकी दो धाराएं हों वह राजमंत्री होता है, और उसमें यदि विशाल बुद्धि हुई तो वह राजा भी बनता है ।

(११)

इक्कपरिक्खित्ता पुण जवमाला दीसए सुमणिबंधे ।
सिट्ठी धणेसरो होइ तह य जणपुज्जियो पुरिसो ॥

एकपरिक्षिप्ता पुनः यवमाला दृश्यते स्वमणिबन्धे ।
श्रेष्ठी धनेश्वरः भवति तथा च जनपूजितः पुरुषः ॥

और जिसके मणिबंधमें यवमालाकी एक ही धारा दिखे वह पुरुष धनेश्वर सेठ बनता है और सब लोग उसकी पूजा करते हैं ।

(१२)

विज्जाकुलधणरूवं रेहतिअं आउ-उड्ढरेहाओ ।
पंच वि रेहाओ करे जणस्स पयडंति[1] पुव्वकयं ॥

विद्याकुलधनरूपं रेखात्रितकं आयुः ऊर्ध्वरेखा ।
पञ्चापि रेखा करे जनस्य प्रणयन्ति पूर्वकृतम् ॥

पुरुषके हाथकी पंचरेखाएं उसके पूर्वजन्मके कर्मोंको सूचित करती हैं । इनमें तीन विद्या, कुल और धनरूप हैं, एक आयुकी रेखा और एक ऊर्ध्व रेखा ।

करतल अर्थात् हाथके तलुएके स्वरूपका फल वराहमिहिरने इस प्रकार बताया है—तलुआ गहराई लिये होनेसे मनुष्य पैत्रिक संपत्तिसे वञ्चित रहते हैं, गहराई गुलाई लिये होनेसे धनी होते हैं तथा तलुआ ऊपरको उठा हुआ होनेसे दातार होते हैं । जिनका तलुआ विषम अर्थात् ऊँचा नीचा हो वे निर्धन होते हैं । जिनका लाल हो वे ईश्वर (धनी), जिनका पीला हो वे व्यभिचारी तथा जिनका रूखा हो वे निर्धन होते हैं । (बृहत्संहिता ६७, ३९–४०)

जिनसेनाचार्यने भी इसी प्रकार लक्षण बतलाये हैं । इतना विशेष है कि वे गहराई लिये तलुएवालेको नपुंसक भी कहते हैं । (हरिवंश पुराण २३, ९१)

(१३)

विद्यारेखा–

तथाहि–मणिबंधाओ रेहा अंगुट्ठपएसिणीण मज्झगया ।
सा कुणइ सत्थजुत्तं विण्णाणविअक्खणं पुरिसं ॥

मणिबन्धात् रेखा अङ्गुष्ठप्रदेशिन्योः मध्यगताः ।
स करोति शास्त्रयुक्तं विज्ञानविचक्षणं पुरुषम् ॥

---

१२. १ प्रतौ 'पणयंति' इति पाठः ।

मणिबंधसे प्रारम्भ होकर जो रेखा अंगूठा और प्रदेशिनोके बीच तक जाती है वह पुरुषको शास्त्रका ज्ञाता और विज्ञानमें कुशल बनाती है।

(१४)

कुलरेखाविषये गाथायुग्मम्–

मणिबंधाओ पयडा पएसिणी जाव जाइ जस रेहा।
बहुबंधुसमाइण्णं कुलवंसं णिद्दिसे तस्स ॥

मणिबन्धात् प्रकटा प्रदेशिनीं यावत्[1] याति यस्य रेखा।
बहुबन्धुसमाकीर्णं कुलवंशं निर्दिशेत्[2] तस्य ॥

मणिबंधसे प्रकट होकर जिसकी रेखा प्रदेशिनी तक जाती है उसकी वह रेखा बहुतसे बंधुओंसे युक्त कुल और वंशकी द्योतक है।

(१५)

दीहाइ जाण दीहं कुलवंस मडहिअं मडहिआए।
वुच्छिण्णाए छिण्णं जाणसु भिण्णं च भिण्णाए ॥

दीर्घया जानीहि दीर्घं कुलवंशं लघुकं लघुकया।
व्युच्छिन्नया छिन्नं जानीहि भिन्नं च भिन्नया ॥

यदि यह रेखा दीर्घ हो तो उसका कुल और वंश भी दीर्घ (अर्थात् पुरानी परम्परा वाला) जानो। यदि रेखा छोटी हो तो कुल और वंश भी ओछा जानो। और यदि यह रेखा छिन्न हो तो कुलवंश भी व्युच्छिन्न (विनष्ट) और भिन्न हो तो भिन्न (विभाजित) जानो।

(१६)

धनविषये–

मणिबंधाओ पयडा संपत्ता मज्झिमंगुलिं रेहा।
सा गुणइ धणसमिद्धं देसक्खायं तमायरियं ॥

मणिबन्धात् प्रकटा सम्प्राप्ता मध्याङ्गुलिं रेखा।
सा करोति धनसमृद्धं देशख्यातं तमाचार्यम् ॥

---

१४. १ प्रतौ 'प्रदेशिनी या च' इति पाठः।
२ प्रतौ 'निर्देशयति' इति पाठः।

मणिबंधसे प्रकट होकर जो रेखा मध्यम अंगुलि तक गयी हो वह पुरुषको धनसमृद्ध, देशप्रसिद्ध आचार्य (उपदेशक) बनाती है।

(१७)

अक्खंडा अप्फुडिया अपल्लवा आयया अछिण्णा य।
इक्का वि उड्ढरेहा सहस्सजणपोसिणी भणिया ॥

अखण्डा अस्फोटिता अपल्लवा आयता अच्छिन्ना च।
एकापि ऊर्ध्वरेखा सहस्रजनपोषिणी भणिता ॥

एक ही ऊर्ध्वरेखा यदि वह अखंड हो, फूटी न हो, उसमें शाखायें न हो, चौड़ी हो और छिन्न न हो, तो हजार मनुष्योंके भरणपोषणकी योग्यता रखती है।

(१८)

विप्पाणं वेदकरी रज्जकरी खत्तिआण सा भणिआ।
वेसाणं अत्थकरी सुक्खकरी सुद्दलोआणं ॥

विप्राणां वेदकरी राज्यकरी क्षत्रियाणां सा भणिता।
वैश्यानाम् अर्थकरी सौख्यकरी शूद्रलोकानाम् ॥

यही रेखा विप्रोंको वेदज्ञाता बनानेवाली है, क्षत्रियोंको राज्य दिलानेवाली है, वैश्योंको धनका लाभ करानेवाली है और शूद्रलोगोंको सुख उपजानेवाली कही गयी है।

(१९)

मणिबंधाओ पयडा संपत्तमणामिअंगुलिं रेहा।
सा कुणइ सत्थवाहं नरवइसयपुज्जियं पुरिसं ॥

मणिबन्धात् प्रकटा सम्प्राप्ता अनामिकाङ्गुलिं रेखा।
सा करोति सार्थवाहं नरपतिशतपूजितं पुरुषम् ॥

मणिबंधसे प्रकट होकर जो रेखा अनामिका तक जाती है वह पुरुषको सार्थवाह, अर्थात् किसी दलका नायक (अगुआ), बनाती है जिसकी सैकड़ों नरेश पूजा करते हैं।

१७–१ प्रतौ 'पोसणी' इति पाठः। २ प्रतौ 'पोषणा' इति पाठः।

(२०)

ऊर्ध्वरेखाविषये गाथा—

मणिबंधाओ पयडा पत्ता चरिमंगुलिं तु जा रेहा।
सा कुणइ जससमिद्धिं सिट्ठिं वा विभवसंजुत्तं ॥

मणिबन्धात् प्रकटा प्राप्ता चरमाङ्गुलिं तु या रेखा।
सा करोति यशःसमृद्धिं श्रेष्ठिनं वा विभवसंयुक्तम् ॥

मणिबंधसे प्रकट होकर जो रेखा अन्तिम अर्थात् छोटी अंगुलि तक जाती है वह खूब यश दिलाती है और यदि पुरुष सेठ हो तो उसका खूब विभव बढ़ाती है।

(२१)

आयुरेखाफलम्—

बीसं तीसं चत्ता पण्णासं सट्ठि सत्तरिं असिअं।
णउयं कणिट्ठियाऊ पएसिणं जाव जाणिज्जा ॥

विंशतिः त्रिंशत् चत्वारिंशत् पंचाशत् षष्टिः सप्ततिः अशीतिः।
नवतिः कनिष्ठिकायाः आयुः प्रदेशनीं यावत् जानीयात् ॥

कनिष्ठिकासे लगाकर प्रदेशिनी तक रेखाके अनुसार बीस, तीस, चालीस, पचास, साठ, सत्तर, अस्सी और नब्बे वर्षकी आयु जानो। अर्थात् छोटी अंगुलीके प्रारम्भमें समाप्त हो जाने वाली रेखा बीस वर्षकी आयु सूचित करती है और उसके अंत तक जाने वाली तीस वर्ष की। इसी प्रकार अनामिकाके प्रारम्भ तक जाने वाली चालीस और अन्त तक जाने वाली पचास वर्षकी आयु बतलाती है। मध्यमाके प्रारम्भ तक जाने वाली रेखासे साठ और अंत तक जाने वालीसे सत्तर वर्षकी आयुका बोध होता है, तथा प्रदेशिनीके प्रारम्भ तक अस्सी और अंत तक नब्बे वर्षकी आयु मानी जाती है।

(२२)

कणंगुलीइ रेहा पएसिणं लंघिऊण जस्स गया।
अखंडिआ अप्फुडिया वरिसाण सयं च सो जियइ ॥

कनीनिकाङ्गुलिरेखा प्रदेशिनीं लङ्घयित्वा यस्य गता ।
अखण्डिता अस्फुटिता वर्षाणां शतं च स जीवति ॥

कनीनिकासे चलने वाली जिसकी रेखा प्रदेशिनीको पार कर जाती है और अखंडित हो, फूटी न हो, वह सौ वर्ष जीता है ।

(२३)

द्वारगाथा—

पल्लविआ विच्छिरणा विरला विसमा य णिद्दिसे[1] रेहा ।
हरिआ फुडिअ विवरणा नीला रुक्खा तहा चेव ॥

पल्लविता विच्छिन्ना विरला विषमा च निर्दिशेत्[2] रेखा ।
हरिता स्फुटिता विवर्णा नीला रूक्षा तथा चैव[3] ॥

रेखाके स्वरूप इस प्रकार बताये गये हैं—पल्लवित, विच्छिन्न, विरल, विषम, हरित, स्फुटित, विवर्ण, नील और रूक्ष ।

(२४)

आयुर्धनरेखा—

पल्लविया सकिलेसा विछिरणा सु पावए महादुक्खं ।
विरला धणव्वयकरी णीइधणं णत्थि विसमासु ॥

पल्लविता सक्लेशा विच्छिन्नासु प्राप्नोति महादुःखम् ।
विरला धनव्ययकरी नीतिधनं नास्ति विषमासु ॥

पल्लवित रेखा क्लेशदायिनी होती है, विच्छिन्न रेखा महादुःख पहुँचाती है, विरल रेखा धनका व्यय कराती है और विषमसे नीतिपूर्वक अर्जित धन नहीं होता।

(२५)

हरियासु चोरियधणं फुडिअविवरणासु बंधणमुवेइ ।
णीलासु णिव्वुइरणो[1] रुक्खासु मिअभोगभागी अ ॥

हरितासु चौर्यधनं स्फुटितविवर्णासु बन्धनमुपैति ।
नीलासु निर्विण्णः रूक्षासु मितभोगभागी च ॥

२३–१ प्रतौ 'णिद्दसे' इति पाठः । २ प्रतौ 'निर्दिशति' इति पाठः । ३ प्रतौ 'एवम्' इति पाठः ।
२५–१ प्रतौ 'णिवुईण्णो' इति पाठः ।

हरितसे धन चोरी चला जाता है, (अथवा चोरीका धन मिलता है); स्फुटित और विवर्णसे बंधन अर्थात् गिरफ्तारी भोगना पड़ता है, नीलसे निर्विण्ण अर्थात् उदास रहता है और रूक्षसे परिमित भोग भोगनेको मिलते हैं।

वराहमिहिरके अनुसार चिकनी और गहरी रेखाएं धनी पुरुषोंकी तथा इससे विपरीत निर्धनोंकी होती हैं। (बृहत्संहिता ६७, ४३)

(२६)

अङ्गुष्ठफलसम्बन्धिरेखाविषये गाथानवकम्—

अङ्गुष्ठस्य मणिबन्धफलम्—

अंगुट्ठयस्य मूले या तिपरिक्खित्ता समे जवे जस्स ।
सो होइ धणाइरणो खत्तिय पुण पत्थिओ होइ ॥

अङ्गुष्ठकस्य मूले या त्रिपरिक्षिप्ताः समा यवाः यस्य ।
स भवति धनाकीर्णः क्षत्रियः पुनः पार्थिवः भवति ॥

अंगूठेके मूलमें जिसके तीन समान यव हों वह धनवान् होता है, और यदि क्षत्रिय हो तो राजा बनता है।

(२७)

दुप्परिक्खित्ताइ पुणो णरवइसमपुज्जिओ णरो होइ ।
एगपरिक्खित्ताए जवमालाए धणेसरो होइ ॥

द्विपरिक्षिप्तया पुनः नरपतिशतपूजितः नरः भवति ।
एकपरिक्षिप्तया यवमालया धनेश्वरः भवति ॥

यदि दो यव हों तो पुरुष सैकड़ों नरेशोंसे पूजा जाता है, और यदि एक ही यवमालाकी धारा हो तो वह धनेश्वर होता है।

वराहमिहिरने अंगूठेके यवोंका फल इस प्रकार बताया है—अंगूठेके बीचके यवोंसे मनुष्य धनी और अंगूठेके मूलके यवोंसे पुत्रवान् होता है। (बृहत्संहिता ६७, ४२)

(२८)

अंगुट्ठयस्स मूले जत्तिअमित्ताउ थूलरेहाओ ।
ते हुंति भाविआ किर तणुआहिं होंति बहिणीओ ॥

अङ्गुष्ठकस्य मूले यावन्मात्राः स्थूलरेखाः ।

ते भवन्ति भ्रातरः किल तन्वीभिः भवन्ति भगिन्यः ॥

अंगूठेके मूलमें जितनी स्थूल रेखाएँ हों उतने भाई होते हैं और जितनी सूक्ष्म रेखाएँ हों उतनी बहिन होती हैं ।

(२९)

पुत्रपुत्रिकाविषये—

अंगुट्ठयस्स हिट्ठे रेहाओ जस्स जत्तिआ हुंति ।
तत्तिअमित्ता पुत्ता तणुआहिं दारिया हुंति ॥

अङ्गुष्ठकस्य अधः रेखाः यस्य यावन्त्यः भवन्ति ।

तावन्मात्राः पुत्राः तन्वीभिः दारिकाः भवन्ति ॥

अंगूठेके अधोभागमें जिसके जितनी रेखाएँ हों उसके उतने ही पुत्र होते हैं । यदि रेखाएँ सूक्ष्म हों तो उतनी लड़कियाँ होती हैं ।

(३०)

जत्तियमित्ता छिण्णा भिण्णा ते दारिआ मुआ जाण ।
अच्छिण्णा अभिण्णा जीवंति अ तत्तिआ तणुआ ॥

यावन्मात्राः छिन्नाः भिन्नाः ता दारिका मृताः जानीहि ।

अच्छिन्नाः अभिन्ना जीवन्ति च तावन्तः तनुजाः ॥

जितनी रेखाएँ छिन्न भिन्न हों उतनी सन्तानें मृत जानो । जितनी रेखाएँ अच्छिन्न और अभिन्न हों उतने बालक जीते हैं ।

(३१)

अंगुट्ठयस्स हिट्ठे अखंडे समफले जवे जस्स ।
तस्स य खाणं पाणं मल्लं सव्वत्थ संपयडइ ॥

अङ्गुष्ठकस्य अधः अखण्डः समफलः यवो यस्य ।

तस्य च खानं पानं माल्यं सर्वत्र संप्राप्नोति[1] ॥

अंगूठेके अधोभागमें जिसके अखंड और समफल यव हों उसे खान-पान और माला (सन्मान) सर्वत्र मिलते हैं ।

३१–१ प्रतौ 'संपजायते' इति पाठः ।

(३२)

अंगुट्ठयस्स मज्झे केदारं जइ हविज्ज पुरिसस्स ।
सो होइ सुक्खभागी पावइ पुण खत्तिओ रज्जं ॥

अङ्गुष्ठकस्य मध्ये केदारं भवेत् पुरुषस्य ।
स भवति सौख्यभागी प्राप्नोति पुनः क्षत्रियः राज्यम् ॥

अंगूठेके मध्यमें यदि केदार होवे तो वह पुरुष सुखभोग पाता है । और यदि क्षत्रिय होय तो राज्य पावे ।

(३३)

केआरमइगयाओ रेहाओ जत्तिआउ दीसंति ।
तित्ताइं बंधणाइं पावइ अत्थक्खयं पुरिसो ॥

केदारमतिगताः रेखाः यावन्त्यः दृश्यन्ते ।
तावन्ति बन्धनानि प्राप्नोति अर्थक्षयं पुरुषः ॥

केदारको काटकर जाती हुई जितनी रेखाएँ दिखें, पुरुष उतने ही बार गिरफ्तारी (जेलखाना) भोगे और धनका क्षय हो ।

(३४)

अंगुट्ठयस्य मूले कागपयं होइ जस्स पुरिसस्स ।
सो पच्छिमम्मि काले सूलेण विवज्जए पुरिसो ॥

अङ्गुष्ठकस्य मूले काकपदं भवति यस्य पुरुषस्य ।
स पश्चिमे काले शूलेन विपद्यते पुरुषः ॥

जिस पुरुषके अंगूठेके मूलमें काकपद हो वह बुढापेमें शूली पाकर मरे ।

(३५)

दाहिणहत्थंगुट्ठयमज्झे अ जवेण जाण दिण जायं ।
वामंगुट्ठजवेणं णूणं जाणिज्ज णिसि जायं ॥

दक्षिणहस्ताङ्गुष्ठकमध्ये च यवेन जानीहि दिने जातम् ।
वामाङ्गुष्ठयवेन नूनं जानीयात् निशि जातम् ॥

दाहिने अंगूठेके मध्यमें यव होय तो दिनमें उसका जन्म हुआ है ऐसा जानो, और बायें अंगूठेके यवसे रात्रिका जन्म समझो ।

(३६)

काणाङ्गुलि-अधस्तनरेखाफलम्—

काणंगुलीइ हिट्ठे रेहाओ जस्स जत्तिआ हुंति ।
तत्तियमित्ता महिला महिलाए वि तत्तिआ पुरिसा ॥

कनिष्ठाङ्गुलेः अधः रेखाः यस्य यावन्त्यः भवन्ति ।
तावन्मात्राः वनिताः वनितानामपि तावन्तः पुरुषाः ॥

कनिष्ठिका अंगुलीके नीचे जिसके जितनी रेखाएँ हों उसके उतनी ही स्त्रियां होती हैं और स्त्रियोंके उतने ही पुरुष होते हैं ।

(३७)

दीहाहिं कोमारी धरिया फलिआहि तो विआणिज्जा ।
सुण्णाहि असोहग्गं फुडिआहिं विइ हवे जाण ॥

दीर्घाभिः कुमारिका धृता फलिताभिः विजानीयात् ।
शून्याभिः असौभाग्यं स्फुटिताभिः व्रती भवेत् जानीहि ॥

यदि ये रेखाएं दीर्घ हों तो जानो कुमारी-पाणिग्रहण हो, यदि फलित हों तो भी यह फल जानो । यदि शून्य हों तो असौभाग्य जानो और फूटी हों तो व्रती होना जानो ।

(३८)

काण-अङ्गुलिमूलरेखाफलम्—

काणंगुलिमूलोवरि रेहाओ जस्स तिण्णि चत्तारि ।
सो होइ पुण्णभागी रायाईणं पि णमणिज्जो ॥

कनिष्ठाङ्गुलिमूलोपरि रेखाः यस्य तिस्रः चतस्रः ।
स भवति पुण्यभागी राजादीनामपि नमनीयः ॥

कनिष्ठिका अंगुलीके मूलमें जिसके तीन या चार रेखाएं हों वह बड़ा पुण्यभागी होता है, राजा आदिक भी उसे नमस्कार करते हैं ।

(३९)

जइ ताउ दाहिणकरे आमूलाओ वि होइ जणपुज्जो ।
अह वामे तो पच्छा सव्वेसिं सेवणिज्जइयो ॥

यदि ताः दक्षिणकरे आमूलतः अपि भवन्ति जनपूज्यः ।
अथ वामे तत्पश्चात्सर्वेषां सेवनीयः (सेवकः) ॥

यदि ये रेखाएँ दाहिने हाथमें हों तो प्रारम्भसे ही लोग उसकी पूजा करें और यदि बायें हाथमें हों तो पीछे अर्थात् बुढ़ापेमें सब लोग उसकी सेवा करें ।

(४०)

व्रतरेखाफलविषये गाथा—

जिट्ठाअणामिआणं मज्झाओ णिग्गयाउ वयरेहा ।
तम्मूले जाओ पुण ताओ इह धम्मरेहाओ ॥

ज्येष्ठानामिकयोः मध्ये निर्गता व्रतरेखाः ।
तन्मूले याः पुनः ताः इह धर्मरेखाः ॥

ज्येष्ठा और अनामिकाके बीचसे निकलने वाली 'व्रतरेखाएँ' कहलाती हैं, तथा जो उनके मूलमें प्रकट होती हैं वे 'धर्मरेखाएँ' कहलाती हैं ।

(४१)

मार्गणरेखा—

तासुवरि तिरित्था जा सा पुण मग्गत्तणे भवे रेहा ।
अप्फुडिआपल्लवदीहराहिं सो चेव तत्थ थिरो ॥

तस्याः उपरि तिर्यक्स्था या सा पुनः मार्गत्वेन भवेत् रेखा ।
अस्फुटितापल्लवितदीर्घाभिः स एव तत्र स्थिरः ॥

धर्मरेखाके ऊपर जो तिरछी रेखा हो वह 'मार्गण' अर्थात् खोज करने वाले की सूचक रेखा है । जिसके यह अस्फुटित, अपल्लवित और दीर्घ हो वह उसी कार्यमें स्थिर रहे ।

(४२)

कुलरेहाए उवरिं मूलम्मि पएसिणीइ जा रेहा ।
गुरुदेवसमरणं तस्स सा वि णिद्देसइ पुरिसस्स ॥

कुलरेखायाः उपरि मूले प्रदेशिन्याः[1] या रेखा ।
गुरुदेवस्मरणं तस्य सापि निर्दिशति पुरुषस्य ॥

४२–१ प्रतौ 'प्रवेशिनी' इति पाठः ।

कुल रेखाके ऊपर, प्रदेशिनीके मूलमें, जो रेखा हो वह उस पुरुषके गुरु और देवताका स्मरण रहेगा यह बतलाती है।

(४३)

अङ्गुलि-अङ्गुष्ठाग्रस्थभ्रमराणां फलम्—

अंगुलिअंगुट्ठुवरिं हवंति भमराउ दाहिणावत्ता।
धणभागी जणपुज्जो धम्ममई बुद्धिमंतो अ॥

अङ्गुल्यङ्गुष्ठोपरि भवन्ति भ्रमराः दक्षिणावर्ताः।
धनभागी जनपूज्यः धर्मरतिः बुद्धिमान् च॥

अँगुलियों और अंगूठेके ऊपर जिसके दाहिनी ओर घूमने वाली भौंरी हो वह धनका भोग करनेवाला, लोगोंमें पूज्य, धर्ममें मति रखने वाला और बुद्धिमान् होवे।

(४४)

पावइ पच्छा सुक्खं पच्छिममुहसंठिए सुणह संखे।
अब्भंतराणणे पुण होहीसि णिरंतरं सोक्खं॥

प्राप्नोति पश्चात् सौख्यं पश्चिममुखसंस्थितः शृणु शङ्खः।
अभ्यंतरानने पुनः भविष्यति निरन्तरं सौख्यम्॥

यदि अंगुलियों और अंगूठेपर पश्चिममुख स्थित शंख हो तो बुढ़ापेमें सुख मिले और यदि शंखका मुख भीतर को हो तो निरंतर सुख मिले।

(४५)

नखानां फलम्—

मज्झुण्णया य सोणा अप्फुडिया जस्स हुंति करणहरा।
सो राया धणवंतो विज्जाहिवई पसिद्धो अ॥

मध्योन्नताः च शोणा अस्फुटिताः यस्य भवन्ति करनखाः।
स राजा धनवान् विद्याधिपतिः प्रसिद्धश्च॥

जिसके हाथके नख बीचमें उठे हुए, लाल और अस्फुटित हों वह राजा होय, धनवान् होय, विद्यावान् होय और प्रसिद्ध होय।

वराहमिहिरने नखोंके स्वरूपका फल इस प्रकार बताया है—जिनके नख तुषके समान (अर्थात् धानके वल्कलके समान बहुरेखायुक्त और रूखे) हों वे नपुंसक होते हैं, जिनके चपटे और फटे हों वे धनहीन, जिनके बुरे विवर्ण (आभा रहित) हों वे परमुखापेक्षी तथा जिनके ताम्रवर्ण हों वे सेनापति होते हैं। (बृहत्संहिता ६७, ४१)

(४६)

मत्स्यादिफलविषये गाथासप्तकम्—

बाहिरमुहसंठाणे मच्छपये[1] मीनसे (?) फलं होइ।
अब्भंतराणणे पुण होहत्ति णिरंतरं सुक्खं॥

बहिर्मुखसंस्थाने मत्स्यपदे मीनसे (?) फलं भवति।
अभ्यन्तरानने पुनः भविष्यति निरन्तरं सौख्यम्॥

यदि बाहरको मुख किये हुए मछलीका चिह्न हो तो बुढ़ापेमें (?) फल दे और यदि भीतरको मुखवाली मछली हो तो निरन्तर सुख होवे।

(४७)

वरपउमसंखसत्तियभद्दासणकुंकुमत्थिभयकुंभं।
वसहगयछत्तचामर दीसहइ वज्जं च मगरं च[1]॥

वरपद्मशङ्खस्वस्तिकभद्रासनकुङ्कुमजलकुम्भाः।
वृषभगजछत्रचामराणि दृश्यते वज्रं च मकरश्च॥

(४८)

तोरण-विमाण-केऊ जस्सेए होंति करयले पयडा।
तस्स पुण रज्जलाहो होही अचिरेण कालेण॥

तोरणविमानकेतवः यस्य एते भवन्ति करतले प्रकटाः।
तस्य पुनः राज्यलाभः भवति अचिरेण कालेन॥

श्रेष्ठ पद्म, शंख, स्वस्तिक, भद्रासन, कुंकुम, जलकुंभ, बैल, गज, छत्र, चामर, वज्र, मगर, तोरण, विमान और केतु ये जिसके करतलमें दिखायी पड़ें उसे बहुत शीघ्र राज्य मिले।

४६—१ प्रतौ '०संठाणयम्मि मच्छपय' इति पाठः।

४७—१ प्रतौ 'वज्जमगरं च' इति पाठः।

(४९)

मच्छेण अण्णपानं कुंते सोभग्गभोयलाहं च ।
दामेण जुअवलइं सिंहे सेणावई होइ ॥

मत्स्येन अन्नपानं कुन्तेन सौभाग्यं भोगलाभं च ।
दाम्ना ऋजुबलित्वं सिंहे सेनापतिः भवति ॥

मछलीसे अन्नपान मिलता है, कुन्त अर्थात् भालेसे सौभाग्य और भोगोंका लाभ, मालासे खूब बल तथा सिंहसे सेनापति होता है ।

(५०)

होइ धणं धएणं व अ आणं वसहे वि सत्थए सुक्खं ।
चक्केण होइ वरसर सरवत्थे इच्छया भोया ॥

भवति धनं धान्यमपि च आज्ञा वृषभेऽपि स्वस्तिकैः सौख्यम् ।
चक्रेण भवति वरश्रीः श्रीवत्से ईप्सिताः भोगाः ॥

बैलके चिह्नसे धन-धान्य और आज्ञा (हुकूमत) मिलते हैं । स्वस्तिकसे सुख, चक्रसे उत्तम लक्ष्मी और श्रीवत्ससे इच्छित भोग ।

वराहमिहिरके अनुसार वज्राकार रेखाओंसे मनुष्य धनी होता है; मीन-पुच्छसे विद्यावान् ; शंख, छत्र, शिविका, गज, अश्व और पद्माकार रेखाओंसे राजा ; कलश, मृणाल, पताका, अंकुशाकार रेखाओंसे ऐश्वर्यवान् ; चक्र, असि, परशु, तोमर, शक्ति, धनुष और कुन्तके आकारवाली रेखाओंसे सेनापति ; उखलाकारसे यज्वान ; मकर, ध्वजा, कोष्ठागारके आकारसे महाधनी ; वेदीसदृशसे अग्निहोत्री और वापी, देवकुलादि त्रिकोणाकार रेखाओंसे धर्मवान् होता है ।

(बृहत्संहिता ६७, ४४-४८)

(५१)

रज्जाभिसेअपट्टं पावइ भद्दासणं भवे जस्स ।
पावइ अणंतसोक्खं गयचामरवज्जछत्तेहिं ॥

राज्याभिषेकपट्टं प्राप्नोति भद्रासनं भवेद् यस्य ।
प्राप्नोति अनन्तसौख्यं गजचामरवज्रछत्रैः ॥

जिसके भद्रासनका चिह्न हो वह राज्याभिषेकपट्ट पावे; तथा गज, चामर, वज्र और छत्र चिह्नोंसे अनन्त सुख पावे ।

(५२)

मयरेण सहस्सधणं पउमे पुण लक्खधणवई होइ ।
संखेण दहकोडिवई चक्केण णिहीसरो होइ ॥

मकरेण सहस्रधनं पद्मेन पुनः लक्षधनपतिः भवति ।
शङ्खेन दशकोटीपतिः चक्रेण निधीश्वरः भवति ॥

मगरसे हजारोंका धन मिले; तथा पद्मसे लाखोंका धनपति होय । शंखसे दश करोड़का स्वामी होय और चक्रसे निधीश्वर हो जाय ।

(५३)

जघन्यफलविषये गाथाद्वयम्—

कागपयं च सुलिहिश्रं करस्स मज्झम्मि दीसए जस्स ।
खिप्पं सो धणमज्जइ पुणो वि णासइ खणे दव्वं ॥

काकपदं च सुलिखितं करस्य मध्ये दृश्यते यस्य ।
क्षिप्रं स धनमर्जयति पुनरपि नाशयति क्षणे द्रव्यम् ॥

जिसके हाथके बीच स्पष्ट 'काकपद' लिखा दिखता हो वह जल्दी धन कमायेगा और फिर जल्दी ही गमायेगा ।

(५४)

हुंति धणा वि हु अधणा बहुरेहारेहिएहिं हत्थेहिं ।
आलिअकरा मणुस्सा परपीडपरायणा हुंति ॥

भवन्ति धनाः अपि खलु अधनाः बहुरेखारेखितैः हस्तैः ।
अरेखाकरा मनुष्याः परपीडापरायणाः भवन्ति ॥

बहुरेखावाले हाथोंसे धनी भी निधन हो जाते हैं; तथा जिनके हाथमें रेखाएं नहीं हैं वे मनुष्य दूसरोंको पीडा देनेमें तत्पर रहते हैं ।

(५५)

फुडिआ पगूढगुप्पा विरलंगुलिविसमपव्वसंपण्णा ।
णिम्मंसा कठिणतला एए परकम्मकरा होंति ॥

स्फुटिताः प्रगूढगुल्माः विरलाङ्गुलिविषमपर्वसम्पन्नाः ।
निर्मांसा कठिनतलाः एते परकर्मकराः भवन्ति ॥

---

५४. १ प्रतौ 'स्फुटं' इति पाठः ।

जो हाथ फैले फूटे हों, जिनके गुल्म खूब गठे हुए हों, अंगुलियां विरली और विषमपर्व हों, जो बहुत मांसवाले न हों और जिनका तलुआ कड़ा हो वे हाथ दूसरोंके कार्य करनेवाले (अर्थात् परोपकारी या नौकरी करनेवाले) होते हैं।

(५६)

धनादिरेखाविषये—

सूई अग्गिसिहा वा सत्ति वा सिरी भज्जए जस्स।
धणवंसआउरेहं तारिसयं णिद्दिसे तस्स॥

सूची अग्निशिखा वा शक्तिः वा श्रीः भज्यते यस्य।
धनवंशआयुरेखाभिः तादृशं निर्दिशेत्[1] तस्य॥

सूची या अग्निशिखा या शक्ति या श्री जिसके हाथमें विभाजित पड़ी हो उसकी धन, वंश और आयुकी रेखाएँ उसी अनुसार फल बताती हैं।

(५७)

धनविषये—

जिअरेहाउ कुलरेहमागया जस्स होइ अखंडा।
रेहा अप्फुडिया से धणवुड्ढी होइ पुरिसस्स॥

जीवरेखा कुलरेखामागता यस्य भवति अखण्डा।
रेखा अस्फुटिता[2] तस्य धनवृद्धिः भवति पुरुषस्य॥

जिसकी जीवरेखा कुलरेखामें आ मिली हो और अखंड हो, तथा रेखा फूटी न हो, उस पुरुषके धनवृद्धि होती है।

(५८)

सामान्यहस्तरेखाफलम्—

वरपउमपत्तसरिसा अच्छिराणा मंसला य संपुराणा।
ससणिद्धरत्तरेहा धणकणगपडिच्छिआ हत्था॥

वरपद्मपत्रसदृशाः अच्छिन्नाः मांसलाः च सम्पूर्णाः।
सस्निग्धरक्तरेखा धनकनकप्रतीप्सकाः हस्ताः॥

जो हाथ उत्तम कमलपत्रके समान, अच्छिन्न, चिकने, संपूर्ण तथा चिकनी और लाल रेखाओं वाले हों वे धान्य और सुवर्णके ग्राहक होते हैं।

---

५६. १ प्रतौ 'निर्दिशति' इति पाठः।

५७. १ प्रतौ 'जिअलेहा' इति पाठः। २. प्रतौ 'अस्फुटिताः' इति पाठः।

(५९)

पूअंति पाणिरेहा णिद्धा जा होंति पउमसंकासा ।
अक्खंडांजलिणिद्धा अच्छिरणा कोमला जस्स ॥

पूजयन्ति पाणिरेखाः स्निग्धाः याः भवन्ति पद्मसङ्काशाः ।
अखण्डाञ्जलिस्निग्धाः अच्छिन्नाः कोमलाः यस्य ॥

जिसकी हस्तरेखाएँ कमलके समान स्निग्ध, अखंड, अच्छिन्न और कोमल होती हैं, वे पूजी जाती हैं ।

(६०)

वाचनाचार्यादिपदसूचिका गाथा—

सो हवइ वायणारी कणिट्ठियाहिट्ठिमागया जवा जस्स ।
उज्झाउ अणमिआए जिट्ठाहिट्ठायतो सूरी ॥

स भवति वाचनाचार्यः कनिष्ठिकाधः आगताः यवाः यस्य ।
उपाध्यायः अनामिकया ज्येष्ठाधः आयतः सूरिः ॥

जिसकी कनिष्ठिकाके नीचे यव निकल आये हों वह वाचनाचार्य होता है, अनामिकाके नीचे यव निकलनेसे उपाध्याय और ज्येष्ठाके नीचे यव निकलनेसे सूरि होता है ।

(६१)

इय करलक्खणमेयं समासओ दंसिअं जइजणस्स ।
पुव्वायरिएहिं णरं परिक्खिऊणं वयं दिज्जा ॥

इति करलक्षणमेतत् समासतः दर्शितं यतिजनस्य ।
पूर्वाचार्यैः नरं परीक्ष्य व्रतं दीयेत ॥

इस प्रकार पूर्वाचार्योंने यतियोंको करलक्षण, संक्षेपमें, बताये हैं । इनके द्वारा मनुष्यकी परीक्षा करके व्रत देना चाहिये ।

इति करलक्षणम् ।

* इति सामुद्रशास्त्रं समाप्तम् *

पारिभाषिक शब्दानुक्रमणिका

भारतीय ज्ञानपीठ काशी के प्रकाशन

[प्राकृत ग्रन्थ]

१ **महाबन्ध** --(महाधवल सिद्धान्त शास्त्र) प्रथम भाग । हिन्दी टीका सहित । पक्की जिल्द । कवर पर बाहुबलि का सुन्दर चित्र । द्वादशाङ्ग से साक्षात् सम्बन्ध रखने वाली, भगवंत भूतबलि की सैद्धान्तिक कृति, जिसकी समाज सदियों से प्रतीक्षा कर रहा था । सं०—पं० सुमेरुचन्द्र दिवाकर शास्त्री । ग्रन्थ साइज के पृ० ४५० । मूल्य १२)

२ **करलक्खण**--(सामुद्रिक शास्त्र) हिन्दी अनुवाद सहित । हस्तरेखा विज्ञान का नवीन ग्रन्थ । सम्पादक—प्रो० प्रफुल्लचन्द्र मोदी एम० ए०, अमरावती । ग्रन्थ साइज के पृ० ४० । मूल्य १)

[संस्कृत ग्रन्थ]

३ **मदनपराजय**—कवि नागदेव विरचित (मूल संस्कृत) भाषानुवाद तथा विस्तृत प्रस्तावना सहित । जिनदेव के काम के पराजय का सरस रूपक । स्वाध्याय के योग्य । सम्पादक और अनुवादक-पं० राजकुमार जी साहित्याचार्य । ग्रन्थ साइज के पृ० २३० । मूल्य ८)

[हिन्दी ग्रन्थ]

४ **जैनशासन**—जैनधर्म का परिचय तथा विवेचन करने वाली सुन्दर रचना । हिन्दू विश्वविद्यालय के जैन रिलीजन के एफ० ए० के पाठ्यक्रम में निर्धारित । कवरपर महावीर स्वामी का तिरंगा चित्र । लेखक—पं० सुमेरुचन्द्र दिवाकर शास्त्री । पृ० ४२० । मूल्य ४।-)

५ **हिन्दी जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास**—हिन्दी जैन साहित्य का इतिहास तथा परिचय । लेखक-कामता प्रसाद जैन । पृ० २८८ । मूल्य २॥।=)

६ **आधुनिक जैन कवि**—वर्तमान कवियों का कलात्मक परिचय और सुन्दर रचनाएँ । सं० रमा जैन । पृ० २९६ । मूल्य ३॥)

७ **मुक्तिदूत**—अञ्जना-पवनञ्जय का पुण्य चरित्र (पौराणिक रोमांस) लेखक—वीरेन्द्रकुमार जैन. एम. ए. । लेखक ने इस उपन्यास में अपनी आत्मा उंडेल दी है । पृ० ३४० । मूल्य ४॥)

८ **दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ**—(जैन कहानियाँ) लेखक—डा० जगदीशचन्द्र जैन, एम. ए. पी-एच. डी. । पृ० २१२ । व्याख्यान तथा प्रवचनों में उदाहरण देने योग्य । मूल्य ३)

९ **पथचिह्न**—(हिन्दी साहित्य की अनुपम पुस्तक) स्मृति-रेखाएँ और निबन्ध । लेखक-सुप्रसिद्ध साहित्यिक श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी । पृ० १२८ । मू० २)

१० **पाश्चात्य तर्कशास्त्र**—(पहला भाग) एफ. ए. के लाजिक के पाठ्यक्रम की पुस्तक । लेखक—भिक्षु जगदीश जी काश्यप, एम. ए., पालि अध्यापक हिन्दू विश्वविद्यालय काशी । पृ० ३८४ । मूल्य ४॥)

११ **जैन भौगोलिक सामग्री और जैनधर्म का प्रसार**—प्राचीन जैन नगरों की प्रामाणिक खोज । लेखक-डॉ० जगदीशचन्द्र जैन एम. ए., पी-एच. डी. बंबई । पृ० ४० । मूल्य ॥)

१२ **कुन्दकुन्दाचार्य के तीन रत्न**—लेखक श्री गोपालदासजी पटेल । अनुवादक—पं० शोभाचन्द्रजी भारिल्ल न्यायतीर्थ, ब्यावर । पृ० १६० । मूल्य २) ।

दिसम्बर सन् १९४७ तक प्रकाशित होने वाले ग्रन्थ

१ २ **न्यायविनिश्चय विवरण प्रथम भाग** तथा **न्यायविनिश्चय विवरण द्वितीय भाग**— सटिप्पण, प्रस्तावना आदि सहित। अकलङ्क देव के न्यायविनिश्चय पर वादिराजसूरि की विस्तृत टीका। सम्पादक—पं० महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य।

३ **तत्त्वार्थवृत्ति**—श्रुतसागर सूरि विरचित। हिन्दी सार सहित। सम्पादक—पं० महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य।

४ **कन्नड प्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थ सूची**—(हिन्दी) मूडबिद्री के जैनमठ, जैनभवन, सिद्धान्त-वसदि तथा अन्य फुटकर ग्रन्थभण्डार, कारकल और अलियूर के अलभ्य ताडपत्रीय ग्रन्थों का सविवरण परिचय। प्रत्येक मन्दिर में तथा शास्त्रभण्डार में विराजमान करने योग्य। सम्पादक—पं० के० भुजबली शास्त्री, मूडबिद्री।

— प्रचारार्थ पुस्तक मंगानेवाले महानुभावोंको विशेष सुविधा।

भारतीय ज्ञानपीठ काशी, दुर्गाकुण्ड, बनारस।